हिन्दी समाज को वाणी दो !

गिरीश्वर मिश्र
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय के कुलपति

'हिन्दी' उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, झारखंड और छत्तीसगढ़ के प्रान्तों में शिक्षा, सरकारी काम-काज और दैनिक जीवन में आम आदमी द्वारा बोली जाने वाली भाषा है। इसके अतिरिक्त दिल्ली, मुंबई और कोलकाता जैसे महानगरों और गुजरात तथा महाराष्ट्र आदि प्रदेशों में भी इसे बोलने वालों की काफी बड़ी संख्या है। अन्य अहिन्दीभाषी प्रदेशों में भी हिन्दी समझने वालों की संख्या अन्य भाषाओं की तुलना में अधिक है। एक अनुमान के अनुसार लगभग 41 प्रतिशत भारतवासी हिन्दी बोलते हैं । यदि इसकी सह भाषाएं जैसे भोजपुरी, मैथिली, अवधी और ब्रज आदि को भी साथ में जोड़ लें तो यह संख्या और बढ़ जाती है। हिन्दी का रचनात्मक साहित्य समृद्ध और वैविध्यपूर्ण है। उसमें निरन्तर प्रयोग होते रहे हैं और उसका निरन्तर विकास हो रहा है। संचार तथा फिल्म के क्षेत्र में हिन्दी का तीव्र गति से विस्तार हुआ है। हिन्दी में पत्रिकाओं, अखबार तथा पुस्तकों का प्रकाशन बढ़ रहा है। हिन्दी ने देश और समाज की अस्मिता, सांस्कृतिक विरासत और देशज ज्ञान परंपरा को भी समृद्ध किया है । कबीर, तुलसी, सूरदास, प्रेमचन्द और निराला जैसे अनेकानेक हिन्दी रचनाकारों ने हमें सांस्कृतिक रूप से सम्पन्न बनाया है। इसके बावजूद आज हिन्दी का प्रभावी उपयोग संतोषजनक स्थिति में नहीं है। हिन्दी माध्यम के छात्र-छात्राओं को तुलनात्मक दृष्टि से हम ज्ञान और कौशल के क्षेत्रों में दुर्बल पाते हैं। इसके चलते उन्हें रोजगार पाने के लिए कई तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में उनकी सफलता सीमित रहती है। इसका परिणाम कुंठा और तनाव तो होता ही है, लेकिन उससे ज्यादा चिन्ताजनक यह है कि मानव संसाधन का एक बड़ा हिस्सा निष्क्रिय और अनुत्पादी बना रहता है और उसके लाभ से समाज वंचित रह जाता है। ऐसी स्थिति में यह एक राष्ट्रीय चुनौती हो जाती है कि हम इस तरह के हिन्दीभाषी मानव संसाधन को कैसे समर्थ बनाएं।

हम भाषा में जीते हैं और भाषा की शक्ति हमारे जीवन में उस भाषा के उपयोग पर निर्भर करती है

। भारत में अंगरेजों के लम्बे औपनिवेशिक शासन ने भारतीय भाषाओं को हाशिए पर ढकेल दिया और एक प्रकार के गहरे सांस्कृतिक विस्मरण की प्रक्रिया को जन्म दिया जिसके कारण भारतवासी भारत से या कहें अपने आप से दूर होते चले गए। यह हस्तक्षेप इतना खतरनाक सिद्ध हुआ कि हमारी अपनी पहचान को लेकर हमारे मन में संशय घेरने लगा । हम दूसरों द्वारा दी गई पहचान को अपनी पहचान मानने लगे और दूसरे के दिए मानकों को वैज्ञानिक और तटस्थ मान कर उनकी सहायता से अपने आप को आंकने लगे । उसकी विचार-कोटियां भारतीय विचारों की उपयुक्तता और प्रासंगिकता को सिरे से खारिज कर देती हैं। इस प्रकार की नीति के चलते केवल भाषा की ही उपेक्षा नहीं हुई, बल्कि भारत के समस्त देशज ज्ञान, कला, साहित्य और प्रौद्योगिकी को ही हम हेठी निगाह से देखने लगे। उसके साथ हमारा सीधा रिश्ता धीरे -धीरे कमजोर होता चला गया। आज स्थिति यह हो गई है कि इस तरह के ज्ञान के लिए हमें विदेशों का मुंह जोहना पड़ रहा है और भारत-विद्या के विभिन्न पक्षों के विशेषज्ञ अब हमें भारत के बाहर मिलते हैं ।

किसी समाज से उसकी अपनी भाषा छीन लेने का सीधा मतलब होता है उसे गूंगा बना देना और अभिव्यक्ति से महरूम कर देना । ऐसे में व्यक्ति की अपनी पहचान जाती रहती है। विदेशी शासकों ने एक पराई भाषा को महत्व देकर पूरे भारतीय समाज को प्रतिमानविरुद्ध ठहरा कर कटघरे में खड़ा कर दिया और अपने आपको गलत मानने के लिए मजबूर कर दिया। उन्होंने समाज को न केवल एक अनुवादी मानस बनने के एक नए और अन्तहीन काम में जोत दिया, बल्कि मन में एक आत्मसंशय और ग्लानि को भी जन्म दिया । इस स्थिति ने सामाजिक जीवन में पराधीनता को बढ़ाया और एक समृद्ध संस्कृति वाले समाज को नए समीकरण में 'पिछड़ा' घोषित कर दिया। आज भी हिन्दी - समाज का एक बड़ा हिस्सा इस हीन भावना से उबर नहीं सका है, पर स्वतंत्र भारत के प्रजातांत्रिक परिप्रेक्ष्य में अंगरेजी का उपयोग एक हद तक सहजता के बदले बनावटीपन और देश हित के बदले निजी स्वार्थ साधने का जरिया बनता गया। न्याय आम आदमी की पहुंच से दूर और महंगा होता गया और पुलिस जैसे सरकारी तंत्र के महकमे डरावने और उलझाऊ हो कर शोषक की भूमिका अपनाते गए । एक विदेशी भाषा को जीवन के केन्द्र में ला कर हमने शासक और शासित का नया वर्ग खड़ा कर दिया।

प्रजातंत्र की सफलता के लिए समाज की भाषा को समर्थ बनाया जाना आवश्यक है ताकि समझने, निर्णय लेने और काम करने में सुभीता हो । तभी शिक्षा, स्वास्थ्य, कोर्ट कचहरी, सरकारी कार्यालय तथा बाजार आदि के विभिन्न उपक्रमों में हिन्दी के अधिकाधिक उपयोग से ही सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो सकेगा और जनता की शासन में भागीदारी बढ़ सकेगी। हिन्दीभाषी समाज, विशेषतः युवा वर्ग को से आधे - अधूरे मन से किए गए सरकारी प्रयास के कारण आज हिन्दी में ज्ञान, कौशल और प्रौद्योगिकी के स्तरीय संसाधनों और आवश्यक प्रशिक्षण की बेहद कमी है । सरकारी संस्थान जैसे केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय और तकनीकी शब्दावली आयोग, तथा विभिन्न राज्यों में गठित हिन्दी ग्रन्थ अकादमियों ने विगत वर्षों में हिन्दी के लिए कार्य किया है, पर अपेक्षित तालमेल की कमी और संकुचित दृष्टि के कारण सीमित उपलब्धियां ही हो सकी हैं । इस महत्वपूर्ण कार्य को पूरा करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक हिन्दी संसाधन केन्द्र स्थापित करने की आवश्यकता है जो न केवल हिन्दी भाषा - साहित्य के अध्ययन अध्यापन को गुणवत्ता दे, बल्कि हिन्दी माध्यम से ज्ञान.विज्ञान के विभिन्न अनुशासनों के मानक प्रस्तुत करे । यह केन्द्र हिन्दी को और उसके माध्यम से हिन्दीभाषी समाज को सशक्त बनाने के लिए अपेक्षित तकनीकी संसाधन उपलब्ध कराने, स्तरीय अध्ययन सामग्री तैयार करने, अनुवाद की प्रौद्योगिकी तथा हिन्दी के अध्यापन की उन्नत प्रविधि आदि की दिशा में योजनाबद्ध ढंग से कार्य करे तो अच्छे परिणाम मिल सकते हैं। वर्धा स्थित महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय ने इस दिशा में पहल की है। इसके प्रयासों को सम्बर्धित कर राष्ट्रीय हिन्दी संसाधन केन्द्र को साकार किया जा सकता है।